Quest Journals
Journal of Research in Humanities and Social Science
Volume 6 ~ Issue 1 (2018)pp: 67-70
ISSN(Online):2321-9467
www.questjournals.org

Research Paper

मानव अधिकार एवं निर्धनताः चुनौतियॉ एवं संभावनायें

डॉ० अशोक कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर
राजनितिक विज्ञान राजकीय महाविद्यालय टप्पल अलीगढ़

प्रस्तावना

वर्तमान भौतिक युग में अर्थहीन होना उस दारूण दुख का हेतु होता है, जिसके दावानल में मनुष्य के पक्ष की समस्त मानवीय संभावनायें भस्म हो जाती हैं। फलतः वह जिस विवशतापूर्ण जीवन यापन को विवश होता है, वह प्रत्येक अर्थ में मनुष्यता को लज्जास्पद स्वरूप देने में कोई संकोच नहीं करता है। निर्धनता आदिकाल से प्रत्येक व्यवस्था के लिए एक चुनौती के रूप में व्याप्त रही है। वर्तमान युग में इस व्याधि के अस्वीकार्य व असहनीय होने का कारण यह है कि यह इक्कीसवीं शताब्दी का वह युग है, जब मनुष्य की वैज्ञानिक व तकनीकी प्रगति कदाचित अपने चरम पर है। इस 'प्रगति' के प्रभाव से जीवन का कोई भी अंश अस्पर्श्य नहीं है। परन्तु इस प्रगति की विलंबना है कि निर्धनता की विभीषिका और तीव्र होती जा रही है। परिणाम स्वरूप वर्तमान प्रगति के साथ विशेषज्ञ प्रायः 'तथाकथित' शब्द का प्रयोग करने में संकोच का अनुभव नहीं करते हैं। वस्तुतः यह कटु यथार्थ है कि वर्तमान मानव जीवन पूर्णतः अर्थोन्मुख है। अर्थात आर्थिक रूप से सशक्त व समर्थ व्यक्ति ही इस उपभोक्तावादी संसार में वांछनीय स्तर का जीवन यापन कर सकता है। भारतवर्ष की आत्मा अध्यात्म के रेशे से निर्मित हुयी है परन्तु वर्तमान काल पूर्णतः भौतिकवाद के पाश में जकड़ चुका है। अर्थात भारतवर्ष भी निर्धनता को एक व्याधि स्वीकारने को विवश है।

निर्धनता का अर्थ

भारतवर्ष में निर्धनता का अर्थ प्रायः परिवर्तित होता रहा है। इसका कारण यह है कि निर्धनता को मापने का पैमाना परिवर्तित होता रहा है। '2012 में भारत सरकार का कथन था कि भारत की जनसंख्या का 21.9 प्रतिशत भाग निर्धनता की सीमारेखा में आता हैं। 2011 में विश्व बैंक का प्रतिवेदन था कि 2005 की क्रय शक्ति के आधार पर भारतीय जनसंख्या का 23.6 प्रतिशत भाग अथवा 276 मिलियन लोग 1.25 डॉलर से कम पर जीवन निर्वाह कर रहे हैं।1 अर्थात विश्वबैंक और भारत सरकार दोनों के आंकलन में भारत की निर्धनता को लेकर निकटतम समानता है। इसी प्रकार 'संयुक्त राष्ट्र द्वारा 2011–12 में यह घोषणा की गयी कि भारत की एक अरब जनसंख्या का लगभग 21.9 प्रतिशत अर्थात 270 मिलियन भाग गरीबी रेखा से नीचे अर्थात 1.25 डॉलर से कम पर जीवन निर्वाह कर रहे हैं।2 इस प्रकार यह स्वीकारा जा सकता है कि भारत सरकार, विश्व बैंक और संयुक्त राष्ट्र तीनों ने आर्यावर्त के जनसामान्य की निर्धनता को लेकर जो आंकलन किया है, वह प्रायः साम्यता रखता है। इस आधार पर यह स्वीकारना अनुचित नहीं होगा कि इक्कीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक में भारतवर्ष में निर्धनता ने लगभग 21 प्रतिशत जनसंख्या को ग्रसित कर रखा था। 2014 (मई) में विश्व बैंक द्वारा जो प्रतिवेदन प्रस्तुत किया गया, उसमें निर्धनता के वैश्विक स्वरूप के साथ–साथ भारतवर्ष में व्याप्त निर्धनता का भी आंकलन प्रस्तुत किया गया है। अपने इस आंकलन में विश्व बैंक द्वारा निर्धनता के आंकलन की प्रविधि और निर्धनता के पैमाने की पुनः समीक्षा करते हुए यह कहा गया कि 'सम्पूर्ण विश्व में लगभग 872.3 मिलियन जनता निर्धन है, उनमें से 179.6 मिलियन भारतीय हैं। अन्य शब्दों में, यह भी कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण विश्व मे लगभग 17.5 प्रतिशत लोग निर्धनता की सीमा में आते हैं और उसमें से 20.6 प्रतिशत लोग भारतीय हैं।3

पुनः स्पष्ट हो रहा है कि भारत में उसकी जनसंख्या का लगभग पांचवा हिस्सा गरीबी की सीमा–रेखा में आता है। उल्लेखनीय है कि यह स्थिति 2010 से 2014 तक न्यूनाधिक रूप से एक समान है। दूसरी ओर यह स्वीकारना भी समीचीन होगा कि स्वतंत्र भारतवर्ष ने अपने अथक प्रयासों से स्वतंत्रता के समय की गरीबी–रेखा को निरंतर लघुतर किया है।

निर्धनता के सन्दर्भ में मानव अधिकारों की सैद्धान्तिक स्थिति

प्रत्येक नियम, अधिनियम, आदेश, अध्यादेश नीति और विधि का प्राथमिक सरोकार रहा है कि मानव को सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक राजनीतिक सभी स्तर पर गरिमापूर्ण जीवन प्रदान किया जाये। आदिकाल से निर्धनता को इस गरिमापूर्ण जीवन की प्राप्ति में एक प्रमुख बाधा स्वीकारा जाता रहा है और इसी प्रारंभिक बिन्दु से ही निर्धनता को समाप्त अथवा क्षीण करने के अनेक समाधानों को भी साकार करने के सफल–असफल प्रयास होते रहे हैं।

मानव अधिकारों के परिप्रेक्ष्य में निर्धनता समाप्ति के जो सशक्त प्रावधान हैं। उन्हें दो अंशों में बॉट कर अग्रवत देखा जा सकता है –

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर

मानव अधिकारों की उत्पत्ति प्राकृतिक विधि से स्वीकारी जाती है और प्रारंभ में मानव अधिकारों के स्थान पर 'प्राकृतिक अधिकारों' शब्द युग्म का प्रयोग होता था। इस प्रकार मानव अधिकारों की विकास यात्रा स्टोइक विचारकों, रोमन अधिवक्ताओं और मध्यकाल के थामस एक्विनास के दर्शन से होती हुयी, 1215 की मैगनाकार्टा विधि तक पहुॅची। तत्पश्चात मानव अधिकारों की अवधारणा ग्रोशियस, हॉब्स, लॉक, रूसों के दर्शन से निरंतर पुष्ट होती हुयी, 1776 में अमेरिकी स्वतंत्रता की घोषणा के पश्चात प्रथम दस संवैधानिक संशोधनों के माध्यम से अपने अभिलेखीय स्वरूप में सर्वप्रथम साकार हुयी। 1789 की फ्रांसिसी क्रांति के पश्चात

मानव अधिकारों की अवधारणा अप्रत्यक्षतः सम्पूर्ण विश्व में सर्वमान्य हो गयी। इन सब स्तरों पर मानव अधिकारों के लिए संभव है कि कोई और संबोधन होता रहा हो परन्तु सभी स्तरों पर उद्देश्य मात्र यह था कि मनुष्य की गरिमा का संरक्षण प्रत्येक मूल्य पर होना चाहिए। 24 अक्टूबर 1945 को संयुक्त राष्ट्र अस्तित्व में आया। उसके पूर्व राष्ट्र संघ के चार्टर की धारा 23 भी स्पष्टतः मानव अधिकारों के संरक्षण से संबंधित थी।

प्रस्तुत बिन्दु पर यह स्पष्ट करना प्रासंगिक होगा कि मानव अधिकारों का सर्वोच्च और सार्वभौम साध्य है, प्रत्येक स्थिति में मनुष्य को मानवीय गरिमा प्रदान करना। कटु यथार्थ यह भी है कि निर्धनता वह व्याधि है, जो सर्वप्रथम मानवीय गरिमा को दीन–हीन बनाती है। अतः यदि किसी भी वैधानिक अथवा संवैधानिक व्यवस्था में मानव अधिकारों के संरक्षण का प्रबन्ध है, तो निश्चय ही वह व्यवस्था निर्धनता को द्रवित करने के लक्ष्य के प्रति दृढ़ संकल्पित है। 'भारतवर्ष के पूर्व मुख्य न्यायाधीश एम.एच. बेग कहते हैं। मानव अधिकारों में न्याय, समानता तथा भेदभावपूर्ण व्यवहार से मुक्ति व स्वेच्छाचारिता से स्वतंत्रता का भाव निहित है।'4

संयुक्त राष्ट्र की स्थापना का लक्ष्य भी मानव अधिकारों का संरक्षण व संवर्द्धन ही है। 10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र द्वारा मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा प्रस्तुत की गयी। इस घोषणा के अग्रलिखित अनुच्छेद ऐसी व्यवस्था के स्पष्टतः पक्षधर है जो निर्धनता को पूर्णतः अस्वीकार करता है, यथा– अनुच्छेद 3, 22, 23 और अनुच्छेद 25, आदि।5

इसी प्रकार 16 दिसम्बर 1966 को संयुक्त महासभा द्वारा दो प्रसंविदाओं को स्वीकारा गया, प्रथम प्रसंविदा नागरिक व राजनीतिक अधिकारों से सम्बंधित है तथा द्वितीय आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक अधिकारों से सम्बंधित है। यह दोनों प्रसंविदायें 1976 में अस्तित्व में आयीं। 1976 में क्रियान्वित हुयी प्रथम प्रसंविदा में अनुच्छेद 6 एवं 8 अप्रत्यक्ष रूप से मनुष्य को निर्धनता से लड़ने का सामर्थ्य देता है। 1976 की द्वितीय प्रसंविदा पूर्णतः आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों से सम्बंधित है। इस प्रसंविदा में प्रस्तावना एवं 31 अनुच्छेद है। प्रत्येक अनुच्छेद व्यक्ति के इस अधिकार का सशक्त पोषण करता है कि उसे सपरिवार मानवीय, गरिमापूर्ण और सुरक्षित जीवन प्राप्त करने का अधिकार है। इन अंतर्राष्ट्रीय सशक्त व्यवस्थाओं के अतिरिक्त संयुक्त राष्ट्र द्वारा व्यक्ति की गरिमा के संरक्षण हेतु कतिपय अन्य व्यवस्थायें भी की गयी हैं, यथा–'व्यवसाय व रोजगार के क्षेत्र में भेदभाव निरोधक प्रसंविदा 1958, संयुक्त राष्ट्र प्रजातीय भेदभाव उन्मूलन सम्बन्धी घोषणा 1963, प्रजातीय भेदभाव उन्मूलन सम्बन्धी अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा 1965, प्रजातीय भेदभाव व प्रजातिवाद संघर्ष कार्यक्रम दशक 1973–1983 एवं प्रजातीय पूर्वाग्रह और प्रजाति सम्बन्धी घोषणा 1978 इत्यादि'6। यह समस्त व्यवस्थायें सम्पूर्ण मानवीय सभ्यता को उन विकारों से प्रतिरक्षित करने के लिए की गयी है, जो मनुष्य के सम्मान और अस्मिता को द्रवित करती है। 1945 में स्थापित संयुक्त राष्ट्र का सर्वोच्च लक्ष्य है मनुष्य को उन समस्त विभीषिकाओं से शेष रखना जो उसकी गरिमा के प्रतिकूल हो, चाहे वह युद्ध, महामारी, भुखमरी अथवा बेरोजगारी कुछ भी हो।

राष्ट्रीय स्तर पर

स्वतंत्रत भारतवर्ष की संवैधानिक आधारशीला ही मानवीय गरिमा के संरक्षण की दृढ़ प्रतिज्ञा पर आधारित है। भारतीय संविधान प्रत्येक स्थिति में मानव अधिकारों के संरक्षण एवं संवर्द्धन के साध्य के प्रति अभिप्रेत है। तत्पश्चात उसके कतिपय प्रावधान, यथा–प्रस्तावना, संविधान के भाग तीन के अनु. 12–35 एवं भाग चार के अनु. 36–51, प्रत्यक्षतः मानव अधिकारों के संरक्षण से सम्बंधित है। प्रस्तावना जहॉ न्याय, समता व स्वतंत्रता की सुनिश्चितता का आश्वासन देती है, वहीं संविधान के भाग तीन के अनुच्छेद 14, अनुच्छेद 19(1) ग, अनुच्छेद 16, 21 एवं अनुच्छेद 23 पूर्णतः ऐसी व्यवस्था के समर्थक है, जो भारतीय जनगण को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करते हैं। इसी प्रकार संविधान के भाग चार के अनुच्छेद 38, 39(घ), 41, 42, 43 और अनुच्छेद 47 ऐसी व्यवस्था के प्रत्यक्ष समर्थक हैं, जो भारतीय जनगण को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करती हो। इन संवैधानिक प्रावधानों के अतिरिक्त मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1994 भी भारतीय जनगण को यह प्रत्याभूति प्रदान करती है कि उनके मानव अधिकारों का संरक्षण प्रत्येक मूल्य पर किया जायेगा।'7

भारतवर्ष में निर्धनता का स्वरूप

स्वतंत्र भारतवर्ष के समक्ष निर्धनता निस्सन्देह, एक संवेदनशील चुनौती रही है। वर्ष 2000 में सक्सेना समिति ने 1972 से 2000 के आंकड़ों के आधार पर अनुमान लगाते हुए कहा था कि भारत की 50 प्रतिशत जनसंख्या निर्धनता की सीमा रेखा में आती है, जबकि योजना आयोग का कहना था कि यह दर 39 प्रतिशत है। 2012 में भारतीय रिजर्व बैंक ने अपने वार्षिक प्रतिवेदन में बताया गोवा में न्यूनतम निर्धन है। लगभग 5.09 प्रतिशत। जबकि निर्धनता का राष्ट्रीय प्रतिशत है 21.92। निर्धनता का सर्वाधिक प्रतिशत छत्तीसगढ़ में 39.93 प्रतिशत पाया गया। इसी प्रकार अरूणांचल प्रदेश, असम, बिहार, झारखंड, मध्यप्रदेश, मणिपुर, ओडिसा, उत्तरप्रदेश इत्यादि वे राज्य हैं, जहॉ निर्धनता का प्रतिशत अधिक हैं। अरूणांचल प्रदेश में 34.67 प्रतिशत, असम में 31.98 प्रतिशत, बिहार में 33.74 प्रतिशत, झारखण्ड में 36.96 प्रतिशत, मध्यप्रदेश में 31.65 प्रतिशत, मणिपुर में 36.89 प्रतिशत, ओडिसा में 32.59 प्रतिशत और उत्तरप्रदेश में 29.43 प्रतिशत निर्धन निवासरत है।'8

जहॉ तक प्रश्न भारतवर्ष में निर्धनता की नवीनतम स्थिति का है, उस सम्बंध में यह कहा जा सकता है कि मई 2014 में विश्व बैंक ने जो प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है, उसमें निर्धन जनसंख्या में गिरावट स्पष्ट देखा जा सकता है। 2011 के एक प्रतिवेदन में यह स्वीकारा गया है कि दक्षिण एशिया में मात्र भारतवर्ष ऐसा राष्ट्र है, जो निर्धनता को न्यून करने के अपने लक्ष्य के निकट है। अर्थात शासन एवं प्रशासन की कल्याणकारी नीतियों के सकारात्मक प्रभाव को स्वीकारते हुए यह कहना अनुचित नहीं होगा कि अभीष्ट लक्ष्य अभी दूर है।

निर्धनता का कारण एवं प्रभाव

भारतवर्ष में निर्धनता का एक प्रमुख कारण है विस्फोटक जनसंख्या वृद्धि। यद्यपि विशेषज्ञों का यह भी मानना है कि जनसंख्या वृद्धि के कारण निर्धनता नहीं है, अपितु निर्धनता के कारण जनसंख्या वृद्धि हो रही है। तथापि यह यथार्थ है कि जनसंख्या वृद्धि ने राष्ट्र के विकास को कुपोषित करने का कार्य किया हैं समस्त योजनायें जिस जनसंख्या समूह को लक्ष्य कर निर्धारित की जाती है, वह जनसंख्या उस योजना के पूरा होते–होते इतनी अधिक बढ़ जाती है कि उस कल्याणकारी योजना का समस्त लाभ निष्प्रभावी प्रतीत होने लगता है।

*Corresponding Author: डॉ० अशोक कुमार

वस्तुतः भारतवर्ष की विकास की गति गणितीय है जबकि जनसंख्या ज्योमितीय गति से बढ़ती है। समस्त संसाधनों, सेवाओं और नागरिक सुविधाओं की एक सीमा होती है, जिन्हें विस्फोटक जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में प्रबन्धित करना कठिन होता है। फलतः जनसंख्या के एक उल्लेखनीय अंश का अनेक सुविधाओं और सेवाओं से वंचित रह जाना प्रत्यक्ष परिणाम होता है, इस विस्फोटक वृद्धि का। तत्पश्चात निर्धनता की समस्या का भी विस्फोटक स्वरूप धारण करते चले जाना अत्यन्त स्वाभाविक प्रतीत होता है।

निर्धनता का एक अन्य महत्वपूर्ण कारण अशिक्षा है। जिन राज्यों में साक्षरता का प्रतिशत अच्छा या संतोषजनक है, वहॉ निर्धनता का प्रतिशत भी न्यून है। उदाहरणार्थ– गोवा में साक्षरता का प्रतिशत है 88.70 और निर्धनता का प्रतिशत 5.09 है। इसी प्रकार हिमाचल प्रदेश, केरल, पंजाब, सिक्किम, दिल्ली, लक्षद्वीप, पुडुंचेरी इत्यादि राज्यों में साक्षरता का प्रतिशत क्रमशः 82.80, 93.91, 76.68, 82.20, 86.34, 92.28, 86.55 है और इन राज्यों में निर्धनता का भी प्रतिशत क्रमशः इस प्रकार है, हिमाचल प्रदेश में 8.06, केरल 7.05, पंजाब 8.26, सिक्किम 8.19, दिल्ली 9.91, लक्षद्वीप 2.77 और पुडुंचेरी में 9.69'।9 इन आंकड़ों का अध्ययन निश्चय ही साक्षरता और निर्धनता में प्रभावोत्पादक सम्बन्धों की पुष्टि करता है अर्थात अशिक्षा के कारण निर्धनता के अनुकूल स्थितियॉ प्रायः निर्मित होती हैं।

भारतवर्ष में निर्धनता का एक गंभीर कारण है–कृषि। 'भारतवर्ष में जहॉ सेवाओं और उद्योग में विकास दर दहाई के अंकों की सीमा में पहॅच रहा है, वहीं कृषि क्षेत्र में विकास दर 4.8 प्रतिशत से घटकर 2 प्रतिशत तक पहुॅच गया है, जबकि लगभग 60 प्रतिशत भारतीय, कृषि क्षेत्र पर रोजगार के लिए आश्रित है। इस प्रकार कृषि क्षेत्र में श्रम की अधिक निर्भरता के कारण प्रच्छन्न बेरोजगारी अथवा अकार्यशीलता का बढ़ना अस्वाभाविक नहीं है।'10 स्पष्ट है कि भारतवर्ष में निर्धनता के प्रमुख कारणों में जनसंख्या वृद्धि, अशिक्षा और कृषि क्षेत्र का भारतीय अर्थव्यवस्था में घटता योगदान इत्यादि है। इनके अतिरिक्त भ्रष्टाचार, प्राकृतिक आपदायें, औद्योगीकरण का अभाव, भौगोलिक दुर्गमता और कौशल विकासोन्मुख शिक्षा के प्रसार का आभाव इत्यादि वे अन्य कारण है, जो भारतवर्ष की निर्धनता की व्याधि को पोषित कर रहे हैं।

भारतवर्ष में निर्धनता की व्याधि का दुष्कर होने का एक महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था लगभग समाप्त हो चुकी है। कृषि उत्पादों का छोटे व सीमान्त कृषकों द्वारा बिक्री करना, हथकरघा, हस्तशिल्प, ग्रामीण कुटीर उद्योग और साप्ताहिक हाट, बाजार अथवा लुहारी, बढ़ईगीरी, मोचीगीरी, एवं छोटे स्तर पर मत्स्याखेट, मुर्गीपालन, पशुपालन इत्यादि परंपरागत व्यवसाय समाप्त हो गये हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव यह हुआ है कि ग्रामीण क्षेत्रों के असंगठित क्षेत्रों में रोजगार की संभावनायें समाप्त हो गयी हैं। फलतः ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता प्रश्रय पाकर फल–फूल रही है।

निर्धनता की व्याधि का सर्वाधिक दुष्प्रभाव शिशुओं के शारीरिक व मानसिक विकास पर पड़ता है। 'विश्व बैंक के 2005 के प्रतिवेदन मे बताया गया था कि भारत के सबसे निर्धन पॉच राज्यों में इस देश के 80 प्रतिशत कुपोषित बच्चे रहते हैं।11 शिशुओं और बच्चों के कुपोषित होने का प्रत्यक्ष अर्थ होता है सम्बंधित राष्ट्र के भविष्य का कुपोषित होना। 'युनिसेफ ने 2005–06 के अपने सर्वेक्षण में पाया था कि भारतवर्ष में पॉच वर्ष से कम आयु के बच्चों में 7.4 मिलियन शिशु कुपोषित थे।'12

निर्धनता का एक दुष्परिणाम जो सम्पूर्ण राष्ट्र को भोगना पड़ता है, वह विधि और व्यवस्था की चुनौती के रूप में सम्मुख आता है। निर्धनता और बेरोजगारी से ग्रस्त व्यक्ति को धन का लोभ देकर किसी भी प्रकार के अवैधानिक कार्य के लिए प्रेरित करना कठिन नहीं होता है। वस्तुतः निर्धनता वह दुधारी व्याधि है, जो सम्बंधित व्यक्ति को प्रत्येक स्तर पर दीन–हीन तो बनाती ही है, अपितु सम्बंधित राष्ट्र को भी उसके नकारात्मक व्यक्तित्व की चुनौती का सामना करना पड़ता है। निर्धन मनुष्य के लिए मानव अधिकार दिवास्वप्न सदृश्य प्रतीत होते हैं और यह यथार्थ भी है कि मानव अधिकार और निर्धनता दो विपरीत ध्रुव पर स्थित अवस्थायें हैं। एक की उपस्थिति दूसरे की अनुपस्थिति अथवा निष्प्रभावी होने की प्रत्याभूति है।

समाधान और संभावनायें

स्वतंत्रता के पश्चात से अब तक भारत में निर्धनता को निषिद्ध एवं निरोधित करने के अनेक सफल प्रयास हो चुके हैं। '2014–15 में विश्व बैंक के ग्लोबल मॉनिटरिंग रिपोर्ट में शताब्दी विकास लक्ष्य पर टिप्पणी करते हुए यह स्वीकारा गया है कि 2008 से 2011 के मध्य निर्धनता को क्षीण करने में भारत का योगदान सर्वाधिक रहा है, जबकि इस अवधि में 140 मिलियन से अधिक लोगों को गरीबी से बाहर निकाला गया।13 इस उद्धरण से यह स्पष्ट होना कठिन नहीं है कि निर्धनता से भारतवर्ष का निर्णायक संघर्ष निरंतर चल रहा है।

भारतवर्ष ने गत शताब्दी के पचास के दशक से कृषि विकास के अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफलता अर्जित करते हुए, खाद्यान्न उत्पादन में निर्भरता निस्सन्देह प्राप्त की है। राशन कार्डो और उचित मूल्य के दुकानों की व्यवस्था ने सम्पूर्ण राष्ट्र में भुखमरी के तांडव को निष्प्रभावी बनाया है। 'निकट अतीत में निर्धनता पर नियंत्रण होने का एक प्रमुख कारण 1991 से तीव्र आर्थिक विकास दर को प्राप्त करना है। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कार्यक्रम (मनरेगा) सरकारी स्कूलों में मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम इत्यादि सदृश्य नवीन कल्याणकारी प्रावधान निर्धनता को द्रवित करने में गंभीर भूमिका निभा रहे हैं। 2012 के एक अध्ययन में भी यह पाया गया है कि मनरेगा ने ग्रामीण निर्धनता अंतराल तथा आंशिक निर्धनता को न्यून किया है।14

यह यथार्थ है कि भारतवर्ष मे निर्धनता अभी भी गंभीर चुनौती है। इसे द्रवित करने में शिक्षा के प्रचार–प्रसार की महत्वपूर्ण भूमिका है। साथ ही साथ, कौशल विकास को प्रोत्साहित करने वाली शिक्षा को प्रोत्साहित करने की भी महती आवश्यकता है।

मनरेगा व मध्यान्ह भोजन जैसी कल्याणकारी योजनाओं को और अधिक प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। एक समय में बिहार में चरवाहा स्कूल योजना को क्रियान्वित किया गया था। इस प्रकार की योजनाओं को और सुधारकर पूरे भारत में लागू किया जाना चाहिये।

महिला साक्षरता, स्वास्थ मिशन, स्वच्छता मिशन और स्थानीय स्तर पर रोजगार के अवसरो को निर्मित करना, ग्रामीण क्षेत्रों के परंपरागत व्यवसायों को पुनर्जीवित करना इत्यादि वे अन्य समाधान है जो भारत की निर्धनता रेखा को क्षीण कर सकते हैं।

अतिशय जनसंख्या वृद्धि को नियोजित करना निर्धनता की समाप्ति के पथ की सबसे प्रमुख चुनौती है। इस दृष्टि से कार्यक्रम बनाये जाने की तत्काल आवश्यकता है। नियोजित जनसंख्या वाले और अधिक साक्षरता वाले प्रदेशों में यदि निर्धनता का तांडव, प्रगति के उत्सव में परिवर्तित हो चुका है, तो निश्चय ही शिक्षा और कौशल विकास शिक्षा तथा जनसंख्या का नियोजन वे आधारभूत कारक है, जिनके कारण निर्धनता को द्रवित करने में महत्वपूर्ण योगदान मिला है।

*Corresponding Author: डॉ० अशोक कुमार

इन समस्त समाधानपूर्वक बिन्दुओं में सर्वोपरि हैं, शासन व प्रशासन की इच्छाशक्ति। शासन व प्रशासन की सात्विक व सशक्त इच्छा शक्ति से क्रियान्वित की गयी समस्त योजनायें अपने लक्ष्यों को अनिवार्यतः प्राप्त हुयी है। इस प्रकार के अनेक दृष्टांत भारतवर्ष में उपलब्ध है। अतः निर्धनता को समाप्त करने में शासन व प्रशासन की महत्वपूर्ण भूमिका को दृढ़ता से रेखांकित व परिभाषित करने की आवश्यकता है।

उपसंहार

मानव अधिकार वह स्थिति है, जो मनुष्य को उसकी अभीष्ट गरिमा से सुसज्जित ही नहीं करती है, अपितु राज्य और उसके प्रयोजन की वैधानिकता, नैतिकता और सात्विकता को भी सिद्ध करती है। वही दूसरी ओर निर्धनता वह स्थिति है, जो सर्वप्रथम मनुष्य की गरिमा का हनन करती है। तत्पश्चात राज्य की औचित्यतता पर भी सशक्त प्रश्न चिन्ह अंकित करती है। अतः यदि कोई राज्य निर्धनता को समाप्त करने का बीड़ा उठाता है तो अप्रत्यक्षतः वह अपनी औचित्यता व प्रयोजन को ही सार्थक करने का बीड़ा उठाता है। स्वतंत्रता के समय भारतवर्ष निर्धनता और उसके वाहक भुखमरी, महामारी, प्राकृतिक आपदाओं, बेरोजगारी, खाद्यान्नों की अनुपलब्धता व औद्योगीकरण का अभाव इत्यादि अनेक व्याधियों से जूझ रहा था। तत्पश्चात अनेक योजनाओं, कल्याणकारी कार्यक्रमों, शिक्षा के प्रचार–प्रसार, खाद्यान्नों की भरपूर पैदावार, औद्योगिक वृद्धि और तकनीकी प्रगति इत्यादि की उपलब्धियों के कारण आर्यावर्त ने प्रगति के अनेक स्तंभ स्थापित किये हैं। निस्सन्देह, बीसवीं शताब्दी के भारतवर्ष ने इक्कीसवीं शताब्दी की अभिलाषा के अनुरूप अपने कलेवर को परिमार्जित कर लिया है। वर्तमान इस आशय के अनेक साक्ष्य स्थापित करता हैं कि भारतवर्ष के पक्ष मे ंविकास के अनेक कीर्तिमान स्थापित हो चुके हैं। परन्तु यह क्रूर यथार्थ है कि चुनौतियों की आशंकाओं को अस्वीकारा नहीं जा सकता है। मानव अधिकारो का संरक्षण व संवर्द्धन वह सर्वोपरि चुनौती है, जिसकी स्थापना में असफल होने का अर्थ है स्वयं को पिछड़े राष्ट्रों की श्रेणी में सम्मिलित करना और कटु सत्य यह भी है कि निर्धनता, मानव अधिकारों के संरक्षण में सर्वाधिक गंभीर चुनौती है। समस्त अंतर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय वैधानिक एवं संवैधानिक प्रावधानो का सर्वोच्च एवं अंतिम साध्य है मानव अधिकारो का संरक्षण एवं संवर्द्धन करना। भारतवर्ष ने इस दृष्टि से अनेक सफल पराक्रम किये है, तथापि लक्ष्य की गंभीरता और दुरूहता को देखते हुए अनेक सफल उद्यमों की आवश्यकता और है। भारतवर्ष मानव अधिकारों की यथार्थ स्थापना के प्रति दृढ़ संकल्पित है। निश्चय ही, निर्धनता को द्रवित व क्षरित करने में वह सफल होगा।

सन्दर्भ – सूची

1. विकीपीडिया दि. 3.9.2015 को अवलोकित।
2. ———वही———।
3. ———वही———।
4. 'इंट्रोडक्शन टु ह्युमन राइटस' (2002) भारतीय मानव अधिकार संस्थान, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित।
5. कुमार पुनीत (2008) 'मानव अधिकार एवं भारतीय लोकतंत्र' (आईएसबीएन : 81–89900–02–1) कैलाश पुस्तक सदन भोपाल, म.प्र. पृ. 38–45 पर आधारित।
6. 'आर्गेनाइजेशंस रिलेटेड टू ह्यूमन राइटस' (2002) भारतीय मानव अधिकार संस्थान, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित।
7. कुमार पुनीत (2008) 'मानव अधिकार एवं भारतीय लोकतंत्र' (आईएसबीएन : 81–89900–02–1) कैलाश पुस्तक सदन भोपाल, म.प्र. पृ. 66–78 पर आधारित।
8. विकी पीडिया दि. 22.8.2015 को अवलोकित।

8ए टाइम्स ऑफ इण्डिया – टाइम्स ऑफ इण्डिया, इंडिया टाइम्स, कॉम 8.7.2011

9. विकी पीडिया दि. 22.8.2015 को अवलोकित।
10. ———वही———।
11. विश्व बैंक रिपोर्ट 2005 एवं 2011 ।
12. विकी पीडिया दि. 22.8.2015 को अवलोकित।
13. ———वही———।
14. ———वही———।